[2011] 6 एस. सी. आर. 384

सी. बी. आई. और अन्य

बनाम

केशव महिंद्रा इत्यादि

(1996 की आपराधिक अपील सं. 1672-75)

सुधारात्मक याचिका (अपराधिक) 2010 की सं. 39-42

[एस. एच. कपाडिया, भारत के मुख्य न्यायाधीश, अल्टमास कबीर, आर. वी. रवींद्रन, बी. सुदर्शन रेड्डी एवं आफताब आलम, न्यायाधीशगण]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973:धाराएँ323 216, 386, 397, 399, 401 - संहिताके तहत प्रदत्त शक्ति का प्रयोग का न्यायालय का क्षेत्राधिकार का दायरा माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सत्र न्यायालय द्वारा लगाए गए आरोपों को रद्द करते हुए एवं अभियोजन के नेतृत्व वाली सामग्री पर अभियुक्त के खिलाफ धारा 304 ए/पी सी के तहत लगाए गए आरोप को निर्देशित करते हुए 13.9.1996 को निर्णय पारित किया-1996 के निर्णय के 14 वर्षों के उपरानत सुधारात्मक याचिकाएँ इस आधार पर दायर की गई कि उक्त निर्णय दंडाधिकारी को धारा 323 के तहत उनके द्वारा न्यायिक शक्ति के प्रयोग से रोक दिया-आयोजित किया गयाःकिसी भी अदालत के किसी भी फैसले को इस तरह से नहीं पढ़ा जा सकता है कि वह किसी अधिनियम या संहिता के स्पष्ट प्रावधानों को रद्द कर दे-1996 के फैसले में, सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा कि उसके निष्कर्ष जांच में एकत्र की गई सामग्री पर आधारित थे और उस स्तर तक अदालत के सामने लाए गए थे-फैसले में हर जगह, अदालत ने आरोपी के खिलाफ उचित आरोपों के संबंध में निष्कर्ष दर्ज किया, यह कहकर निष्कर्ष या अवलोकन को योग्य बनाया कि "आरोप तैयार करने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत

सामग्री पर"-1996 का फैसला धाराएँ 209,122,81,240 के स्तर पर दिया गया था। और निर्णय को यह कहने के लिए नहीं पढ़ा जा सकता है कि यह एस. एस. के तहत शक्तियों के एक सक्षम न्यायालय को निरावृत्त करता है। 1996 के फैसले को संहिता के प्रासंगिक प्रावधानों के तहत सक्षम अधिकार क्षेत्र की अदालत द्वारा शक्तियों के उचित प्रयोग के खिलाफ एक बाधा नहीं कहा जा सकता है-तत्काल उपचारात्मक याचिकाओं में बनाए गए रूपा अशोक हुर्रा मामले के मापदंडों के भीतर आने वाला कोई आधार नहीं है-इसके अलावा, सर्वोच्च न्यायालय के 1996 के फैसले से लगभग 14 साल बाद ऐसी उपचारात्मक याचिकाएं दायर करने के लिए कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है-उपचारात्मक याचिकाएँ खारिज की गई सुधारात्मक याचिका।

*रूपा अशोक हुर्रा बनाम अशोक हुर्रा **(2002) 4 एस. सी. सी. 388-पर भरोसा किया।**

केशुब महिंद्रा बनाम एम. पी. राज्य **(1996) 6 धारा 129-संदर्भित।**

वाद विधि संदर्भ

(1996) 6 धारा 129	संदर्भित	पैरा 1,3
(2002) 4 धारा 388	निर्भर करती है	पैरा 4

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकारः 1996 की अपराधिक अपील सं. 1672-1675

में

2010 की सुधारात्मक याचिका (आपराधिक) संख्या 39-42

गुलाम ई. वाहनवती, ए. जी., इंदिरा जयसिंह, एच. पी. रायल और विवेक के. तन्खा, ए. एस. जी., एच. एन. साल्वे, अमित देसाई, सिद्धार्थ लूथरा, सी. यू. सिंह और राम जेठमलानी, देवदत्त कामत, अनूपम एन. प्रसाद नैला जंग, निशांत पाटिल, रोहित शर्मा,

श्रीकांत एफ. एन. तेरदल, टी. ए. खान, अर्लंद कुमार शर्मा, पियांका तेलंग, नितिन लोनकर परमेश्वर, समृद्धि सिन्हा, चिनमॉय शर्मा, अनिरुद्ध शर्मा, आनंद मुखर्जी, हर्ष एन. पारेख, अवि सिंह, करुणा नंदी, अपर्णा भट, गोपाल कृष्ण शेनॉय, महेश अग्रवाल, नीहा नागपाल, ई. सी. अग्रवाल, राधिका जी. गौतम, ऋषि अग्रवाल, ओ. पी. खेतान, रमेश सिंह, ए. टी. पात्रा, अजय गुप्ता, आराधना पात्रा (ओ. पी. खयतन एंड कंपनी के लिए), रमेश सिंह, ए. टी. पात्रा, एस. यू. के. सागर, बीना माधवन, वैभव गग्गर, अनुराग अहलूवालिया, कृष्ण कुमार सिंह, करण कंवल, मोहिंदर चरक, विनीता शशिधरन, प्रसीना ई. जोसेफ (लॉयर्स निट एंड कंपनी के लिए), प्रतुल शांडिल्य, ऋषभ संचेती, समीर सोधी वैभव श्रीवास्तव, कुमानन डी., वरुण चोपड़ा, सी. डी. सिंह, संजय पारिख, अग्नि सेल, ममता सक्सेना, अनीथा शेनॉय, प्रशांतो चंद्र सेन, मोहित युग चौधरी, लता कृष्णमूर्ति, नितिन दहिया, पल्लव कुमार, बी. ऋषि माहेश्वरी और पी.एस. सुधार पेश होने वाले पक्षकारों के हेतु।

न्यायालय का आदेश दिया गया था

आदेश

एस.एच. कपाडिया, भारत के मुख्य न्यायाधीश

1. ये सुधारात्मक याचिकाएँ केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा **केशुब महिंद्रा बनाम एम.पी. राज्य** (1996 की अपराधिक अपील सं.-1672-1675 जिसका निर्णय 13.9.1996 को हआ एवं 1996(6) एस सी सी 129 में प्रतिवेदित हुआ) मामले में इस न्यायालय के दिनांकित 13.9.1996 के निर्णय एवं आदेश को स्मरण करते हुए, निम्नलिखित आदिखंडों में दायर की गई हैः

(i) जब इस न्यायालय ने दिनांक 13.9.1996 के उक्त निर्णय द्वारा अभियुक्त संख्या 2 से 5,7 से 9 और 12 के खिलाफ आई. पी. सी. की धारा 304 (भाग II), 324,326

और 429 के तहत लगाए गए आरोपों को रद्द कर दिया और निचली अदालत को आई. पी. सी. की धारा 304 ए के तहत आरोप तय करने का निर्देश दिया, तो इस न्यायालय के पास आई. पी. सी. की धारा 304 (भाग II) के तहत आरोपित अपराध को प्रथम दृष्टया बनाने के लिए पर्याप्त सामग्री थी। इसलिए, इस न्यायालय ने ऐसी सामग्री की अनदेखी करने और आई. पी. सी. की धारा 304 (भाग II) के तहत आरोप को रद्द करने में गंभीर त्रुटियां की।

(ii) भोपाल के विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष उक्त अभियुक्त के मुकदमे के दौरान आई. पी. सी. की धारा 304 ए के तहत आरोप के समर्थन में रखे गए साक्ष्य से प्रथम दृष्टया पता चलता है कि उक्त अभियुक्त ने आई. पी. सी. की धारा 304 (भाग II) के तहत दंडनीय अपराध किए थे। लेकिन इस न्यायालय के दिनांकित 13.9.1996 के उक्त निर्णय के लिए, विद्वान मजिस्ट्रेट ने उक्त सामग्री का ध्यान करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 323 (संक्षेप में 'संहिता') के तहत सत्र न्यायालय को मामला सौंप दिया। हालाँकि, इस न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए स्पष्ट निष्कर्ष को देखते हुए, दिनांकित 13.9.1996 के अपने बाध्यकारी निर्णय में कि आई. पी. सी. की धारा 304 (भाग II) के तहत आरोप के लिए कोई सामग्री नहीं थी और आई. पी. सी. की धारा 304 ए के तहत आरोप तय करने के निर्देश के साथ उक्त आरोप को परिणामी रूप से रद्द करने के लिए, विद्वान मजिस्ट्रेट को संहिता की धारा 323 के तहत अपनी न्यायिक शक्ति का प्रयोग करने से रोक दिया गया था, भले ही संहिता ने मुकदमे के दौरान रिकॉर्ड पर आए साक्ष्य के आधार पर आरोप को बदलने या मामले को सत्र न्यायालय को सौंपने का अधिकार क्षेत्र निहित किया हो।

(iii) इसलिए दिनांकित 13.9.1996 के निर्णय के परिणामस्वरूप अपूरणीय अन्याय कायम रहा जिससे दिनांकित 13.9.1996 के निर्णय को वापस लेने की मांग करने वाली सुधारात्मक याचिकाएं दायर करने की आवश्यकता हो गई।

2. 2 दिसंबर, 1984 की रात को यूनियन कार्बाइड (आई) लिमिटेड (यू. सी. आई. एल.) के भोपाल संयंत्र में एम. आई. सी. भंडारण टैंक से वातावरण में घातक गैस बड़े पैमाने पर निकला, जिससे 5,295 लोगों की मौत हो गई थी, एवं 5,68,292 व्यक्ति स्थायी पूर्ण अक्षमता से लेकर कम गंभीर चोटों तक विभिन्न प्रकार की चोटों से पीड़ित थे। घटना के अगले दिन, हनुमान गंज पुलिस स्टेशन के एस. एच. ओ. ने स्वतः संज्ञान लेते हुए आई. पी. सी. की धारा 304 ए के तहत 1984 का अपराध मामला संख्या 1104 दर्ज किया। 6 दिसंबर, 1984 को जाँच सी. बी. आई. को सौंप दी गई, जिसकी जाँच पूरी हो गई, जिसके परिणामस्वरूप सी. बी. आई. द्वारा सी. जे. एम., भोपाल की अदालत में 1 दिसंबर, 1987 को आरोप पत्र दाखिल किए गए। चूंकि आरोप पत्रों में अन्य बातों के साथ-साथ आई. पी. सी. की धारा के साथ पठित धारा 304,324,326,429 के साथ पठित धारा 35 के तहत अपराध करने का आरोप लगाया गया है, इसलिए सी. जे. एम. द्वारा मामला 1992 के सत्र मामला संख्या 237 के रूप में सत्र न्यायालय को सौंपा गया था (देखें - आदेश दिनांक 30 अप्रैल, 1992)। 8 अप्रैल, 1993 को भोपाल के 9 वें अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने आरोपी संख्या 5 से 9 के खिलाफ भा.दं.सं. की धारा 304 (भाग II), 324,326 और 429 के तहत आरोप तय करने और आरोपी संख्या 2,3,4 और 12 के खिलाफ उन्हीं धाराओं के तहत लेकिन आई. पी. सी. की धारा 35 की सहायता से आदेश पारित किया। यह उल्लेख किया जा सकता है कि आरोप तैयार करने के समय, न्यायालय ने अपने समक्ष अभियुक्त संख्या 2 से 9 और अभियुक्त संख्या 12 (यू. सी. आई. एल.) को रखा था, जबकि अभियुक्त संख्या 1 (वारेन एंडरसन) फरार था और न्यायालय अन्य दो कंपनियों, यू. सी. सी. और यूनियन

कार्बाइड ईस्टर्न इंक., अभियुक्त संख्या 10 और 11 को भी अपने समक्ष लाने में असमर्थ था।

3. अभियुक्त ने मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के समक्ष सत्र न्यायालय द्वारा आरोप तय करने के आदेश को असफल रूप से चुनौती देने के बाद, मामले को चार अलग-अलग अपीलों में इस न्यायालय में लाया जिसमें प्रमुख मामला था। 1996 का अपील (अपराधिक) सं. 1672 अभियुक्त सं. 2 के कहने पर दायर किया गया था जो अंततः **केशुब महिंद्रा (उपरोक्त)** के मामले में 13 सितंबर, 1996 को इस न्यायालय की खंड पीठ के फैसले द्वारा निपटा दिया गया था। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि आरोप तय करने के चरण में विचारण न्यायालय के समक्ष अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत सामग्री पर, धारा 304 (भाग) II के तहत अभियुक्त के खिलाफ कोई आरोप नहीं बनाया जा सकता था या आई. पी. सी. की धारा 35 की सहायता के साथ या उसके बिना धारा 324,326,429 के तहत और इसने तदनुसार सत्र न्यायालय द्वारा बनाए गए आरोपों को रद्द कर दिया और निर्देश दिया कि अभियोजन पक्ष के नेतृत्व वाली सामग्री पर आई. पी. सी. की धारा 304 ए के तहत आरोपी संख्या 5,6,7,8 और 9 के खिलाफ और उन्हीं धाराओं के तहत आरोपी संख्या 2,3,4 और 12 के खिलाफ धारा 35 की सहायता से आरोप लगाया जा सकता है। समीक्षा याचिका दायर करने के लिए अनुमति मांगने वाले आवेदन द्वाराएक प्रस्तावित समीक्षा याचिका में 1997 की अपराधिक विविध याचिका संख्या 1713-16 10 मार्च, 1997 को खारिज कर दी गई। ये आवेदन भोपाल गैस पीडित संघर्ष सहयोग समिति (बीजीपीएसएसएस), भोपाल गैस पीडित महिला उद्योग संगठन (बीजीपीएमयूएस) और भोपाल ग्रुप फॉर इंफॉर्मेशन एंड एक्शन (बीजीआईए) द्वारा संयुक्त रूप से दायर किए गए थे। सी. बी. आई./एम. पी. राज्य ने 1996 के उक्त फैसले पर सवाल नहीं उठाया या संविधान के अनुच्छेद 137 के तहत कोई समीक्षा याचिका दायर नहीं की और इसके बजाय आई. पी. सी. की धारा 304 ए, 336,337,338 के साथ धारा 35 के तहत आरोपी पर मुकदमा चलाने के लिए अगले 14 वर्षों तक आगे बढ़े।

यह केवल 26 अप्रैल, 2010 को है, जब बचाव पक्ष के साक्ष्य समाप्त हो गए और वरिष्ठ लोक अभियोजक द्वारा मौखिक तर्क समाप्त हो गए कि, बी. जी. पी. एस. एस. एस. और बी. जी. पी. एम. यू. एस. द्वारा संयुक्त रूप से आई. पी. सी. की धारा 304 (भाग II) में आरोप बढ़ाने के लिए धारा 216 दं.प्र.सं. की के तहत एक याचिका दायर की गई थी। इस आवेदन का सी. बी. आई. ने समर्थन नहीं किया था। उक्त आवेदन को उसी दिन सी. जे. एम. द्वारा खारिज कर दिया गया था। हालाँकि, सी. जे. एम. के इस आदेश को कभी भी धारा 397/399 के तहत या धारा 482 दं.प्र.सं. की के तहत चुनौती नहीं दी गई। अंततः 7 जून, 2010 को 1984 का आपराधिक मामला संख्या 1104 सी. जे. एम. द्वारा निपटाया गया, जिसमें उसने आई. पी. सी. की धारा 304 ए, 336,337,338 के साथ पठित धारा 35 के तहत आरोपी संख्या 2 से 5,7 से 9 और 12 को दोषी ठहराया और उन्हें दो साल के कारावास की सजा सुनाई। 29 जून, 2010 को एम. पी. राज्य द्वारा मौजूदा आरोपों के तहत सजा बढ़ाने के अनुरोध के साथ सत्र न्यायालय के समक्ष 2010 की आपराधिक अपील संख्या 369 दायर की गई थी। उसी दिन एम. पी. राज्य ने दं.प्र.सं. की धारा 397 के तहत सत्र न्यायालय के समक्ष 2010 का आपराधिक संशोधन आवेदन संख्या 330 भी दायर किया, जिसमें सी. जे. एम. द्वारा धारा 216 दं.प्र.सं.की के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए आरोप को धारा 304 (भाग II) तक बढ़ाने में कथित विफलता को चुनौती दी गई एवं दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 323 के तहत मामले की सुनवाई सत्रों को सौंपना और अन्य बातों के साथ-साथ आरोप बढ़ाने और प्रतिबद्ध करने के निर्देश के लिए प्रार्थना करना। 29 जुलाई, 2010 को सी. बी. आई. द्वारा मौजूदा आरोपों के तहत सजा बढ़ाने के लिए सत्र न्यायालय के समक्ष 2010 की आपराधिक अपील संख्या 487 दायर की गई थी। 2 अगस्त, 2010 को इस अदालत के समक्ष वर्तमान सुधारात्मक याचिकाएं दायर किए जाने के बाद ही 23 अगस्त, 2010 को सी. बी. आई. ने आपराधिक पुनरीक्षण दायर किया। सभी अपीलें और संशोधन सत्र न्यायालय के समक्ष लंबित रहते हैं।

4. हमारे लिए यह स्पष्ट है कि सी. बी. आई. और एम. पी. राज्य द्वारा दायर आपराधिक संशोधनों में कानूनी स्थिति सही ढंग से बताई गई है। लेकिन उपचारात्मक याचिकाएं एक ऐसी याचिका पर आधारित हैं जो गलत और भ्रामक है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, उपचारात्मक याचिकाओं के मुख्य बिंदुओं में से एक यह है कि भले ही मजिस्ट्रेट के समक्ष मुकदमे के दौरान, अतिरिक्त साक्ष्य रिकॉर्ड पर आए हैं जो उच्च आरोप (ओं) को तैयार करने और उन उच्च आरोपों पर अभियुक्तों के मुकदमे की पूरी तरह से गारंटी देते हैं, जब तक कि 1996 का निर्णय रहता है, सत्र न्यायालय अभियुक्त के खिलाफ किसी भी उच्च आरोप को उसी तरह से तैयार करने में असहाय महसूस करेगा जैसे सत्र न्यायालय ने कहा कि उच्चतम न्यायालय के फैसले को देखते हुए किसी भी अदालत को आई. पी. सी. की धारा 304ए के तहत आरोपी पर उससे अधिक के अपराध के लिए मुकदमा चलाने की शक्ति नहीं है। यह धारणा गलत है और इसका कोई आधार नहीं है। यह 1996 की बाध्यकारी प्रकृति के संबंध में पूरी तरह से गलतफहमी से उत्पन्न होता है। इस न्यायालय द्वारा **किसी भी न्यायालय के किसी भी निर्णय को इस तरह से नहीं पढ़ा जा सकता है कि किसी अधिनियम या संहिता में व्यक्ति प्रावधानों को रद्द कर दिया जाए** और 1996 के निर्णय का ऐसा करने का इरादा कभी नहीं था। 1996 के फैसले में, इस अदालत को यह पूरी तरह से स्पष्ट करने के लिए दर्द हो रहा था कि उसके निष्कर्ष जांच में एकत्र की गई सामग्री पर आधारित थे और **उस स्तर तक** अदालत के सामने लाए गए थे। निर्णय में प्रत्येक स्थान पर जहां न्यायालय निष्कर्ष को दर्ज करता है या अभियुक्त के खिलाफ उचित आरोप के संबंध में एक अवलोकन करता है, वह "आरोप तैयार करने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत सामग्री पर" कहकर निष्कर्ष या अवलोकन को योग्य बनाता है। “इस स्तर पर," उस निर्णय में एक तरह का निरंतर निषेध है। 1996 का निर्णय संहिता की धाराओं 209/228/240 के स्तर पर दिया गया था और हम यह देखने में पूरी तरह से असमर्थ हैं कि निर्णय को यह कहने के लिए कैसे पढ़ा जा सकता है कि 323,216,386,397

399,401 आदि को हटा दिया या उन प्रावधानों के तहत सक्षम न्यायालय की शक्तियों को निरावृत्त किया। हमारे विचार में, अभिलेख की सामग्री के आधार पर, यह मान लेना गलत है कि 1996 का निर्णय संहिता के प्रासंगिक प्रावधानों के तहत सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय द्वारा शक्तियों के उचित प्रयोग के खिलाफ एक बाधा है। यदि उपचारात्मक याचिकाकर्ता के अनुसार, विद्वान मजिस्ट्रेट सही कानूनी स्थिति की सराहना करने में विफल रहे और संहिता की धारा 323 के तहत या संहिता की धारा 216 के तहत शक्ति का प्रयोग करने से उसके हाथों को बांधने के रूप में दिनांकित 13.9.1996 के निर्णय को गलत तरीके से पढ़ा, तो इसे निश्चित रूप से अपीलीय/पुनरीक्षण अदालत द्वारा ठीक किया जा सकता है। वास्तव में, एम. पी. राज्य और सी. बी. आई. (जो अभी भी लंबित हैं) द्वारा यद्यपि देर से दायर पुनरीक्षण याचिकाओं ने पुनरीक्षण के आधार पर इस स्थिति पर जोर दिया है। इसके अलावा, **रूपा अशोक हुर्रा बनाम अशोक हुर्रा 2002 (4) एस सी सी 388** के प्रायल के भीतर कोई आधार उपचारात्मक याचिकाओं में बनाया गया है। साथ ही सर्वोच्च न्यायालय के 1996 के फैसले से लगभग 14 साल बाद ऐसी उपचारात्मक याचिकाएं दायर करने के लिए कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है। इसलिए सुधारात्मक याचिकाओं को खारिज कर दिया जाता है।

5. ऊपर बताई गई किसी भी बात को विद्वान सत्र न्यायाधीश, भोपाल के समक्ष लंबित मामलों के गुण-दोष पर किसी भी विचार या राय की अभिव्यक्ति के रूप में नहीं माना जाएगा।

डी.जी

सुधारात्मक याचिकाएं खारिज